प्रकाशन तिथि : 26 दिसम्बर 2018, मूल्य 2 रुपये, वर्ष 37, अंक 6, कुल पृष्ठ 28

ISSN 2454 - 5163

वीतराग-विज्ञान

(पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट का मुखपत्र)

सम्पादक :
डॉ. हुकमचंद भारिल्ल

श्री 1008 शांतिनाथ जिनालय, गौरझामर, जिला–सागर (म.प्र.)

(दिनांक 19 से 24 दिसम्बर तक होने वाले पंचकल्याणक के अवसर पर)

वीतराग-विज्ञान (425)

हिन्दी, मराठी व कन्नड़ भाषा में प्रकाशित

जैनसमाज का सर्वाधिक बिक्रीवाला आध्यात्मिक मासिक

सम्पादक :
डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल

सह-सम्पादक :
डॉ. संजीवकुमार गोधा

प्रकाशक एवं मुद्रक :
ब्र. यशपाल जैन द्वारा पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट के लिये जयपुर प्रिण्टर्स प्रा. लि., जयपुर से मुद्रित एवं प्रकाशित।

सम्पर्क-सूत्र :
पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट
ए-4, बापूनगर, जयपुर - 302015
फोन :(0141)2705581, 2707458
E-mail : ptstjaipur@yahoo.com
ISSN 2454 - 5163

शुल्क :

आजीवन	:	251 रुपये
वार्षिक	:	25 रुपये
एक प्रति	:	2 रुपये

मुद्रण संख्या :

हिन्दी	:	7200
मराठी	:	2000
कन्नड़	:	1000
कुल	:	10200

कर्म शक्ति

आत्मा में कर्मशक्ति त्रिकाल है, इसलिये वह कर्म रहित (अर्थात् अपने कार्य रहित) कभी नहीं होता। आत्मा जड़कर्म रहित त्रिकाल है; किन्तु अपने भावरूप कर्म रहित वह कभी नहीं होता। हाँ, अज्ञान दशा में वह विपरीत (रागद्वेष मोहादि) कर्मरूप से परिणमित होता है और स्वभाव का भान होने पर सम्यग्दर्शनादि निर्मल कार्यरूप से परिणमित होता है; किन्तु यहाँ इतनी विशेषता है कि जिन्हें अपनी स्वभावशक्ति का भान हुआ है, ऐसे साधक तो स्वभाव के आलम्बन से निर्मल कर्मरूप ही परिणमित होते हैं। मलिन कार्यों को वे अपने स्वभाव में स्वीकार नहीं करते; क्योंकि वे मलिन भाव स्वभाव के आधार से नहीं हुए हैं और न स्वभाव के साथ उसकी एकता है। शुद्ध स्वभाव के आधार से तो निर्मल कार्य ही होता है और उसी को वास्तव में आत्मा का कार्य स्वीकार किया जाता है।

– आत्मप्रसिद्धि, पृष्ठ 494

वीतराग-विज्ञान ही, तीन लोक में सार।
वीतराग-विज्ञान का , घर-घर होय प्रसार।।

वर्ष : 37 (वीर नि. संवत् - 2545) 425 अंक : 6

आतम रूप अनुपम...

आतम रूप अनुपम अद्भुत, याहि लखैं भव सिंधु तरो।।
आतम रूप अनुपम ...।।

अल्पकाल में भरत चक्रधर, निज आतम को ध्याय खरो।
केवलज्ञान पाय भवि बोधे, ततछिन पायौ लोक सिरो।।
आतम रूप अनुपम ...।।1।।

या बिन समुझे द्रव्यलिंग मुनि, उग्र तपन कर भार भरो।
नव ग्रीवक पर्यन्त जाय चिर, फेर भवार्णव मांहि परो।।
आतम रूप अनुपम ...।।2।।

सम्यग्दर्शन ज्ञान चरन तप, ये ही जगत में सार नरो।
पूरब शिव को गये जांहि अब, फिर जैहैं यह नियत करो।।
आतम रूप अनुपम ...।।3।।

कोटि ग्रंथ को सार यही है, ये ही जिनवाणी उचरो।
'दौल' ध्याय अपने आतम को, मुक्ति-रमा तव वेग वरो।।
आतम रूप अनुपम ...।।4।।

– कविवर पण्डित दौलतरामजी

श्री वीतराग-विज्ञान विद्यापीठ परीक्षा बोर्ड

श्री टोडरमल स्मारक भवन

ए-4, बापूनगर, जयपुर - 302015 (राजस्थान)

शीतकालीन परीक्षा - कार्यक्रम -2019

दिन व दिनांक	नाम ग्रन्थ
शुक्रवार 25 जनवरी 2019	1. बालबोध पाठमाला भाग-1 (मौखिक) 2. जैन बालपोथी भाग-1 (मौखिक) 3. वीतराग-विज्ञान पाठमाला भाग-1 4. तत्त्वज्ञान पाठमाला भाग-1 5. छहढाला (पूर्ण) 6. तत्त्वार्थसूत्र (मोक्षशास्त्र) पूर्वार्द्ध 7. मोक्षमार्गप्रकाशक (पूर्वार्द्ध) 8. जैन सिद्धान्त प्रवेशिका (गोपालदासजी बरैया कृत) 9. विशारद प्रथम खण्ड (प्रथम वर्ष)
शनिवार 26 जनवरी 2019	1. बालबोध पाठमाला भाग-2 (मौखिक) 2. जैन बालपोथी भाग-2 (मौखिक) 3. वीतराग-विज्ञान पाठमाला भाग-2 4. तत्त्वज्ञान पाठमाला भाग-2 5. द्रव्यसंग्रह (पूर्ण) 6. तत्त्वार्थसूत्र (मोक्षशास्त्र) उत्तरार्द्ध 7. लघु जैनसिद्धान्त प्रवेशिका (सोनगढ़) 8. मोक्षमार्गप्रकाशक (उत्तरार्द्ध) 9. विशारद द्वितीय खण्ड (प्रथम वर्ष) 10. विशारद प्रथम खण्ड (द्वितीय वर्ष)
रविवार 27 जनवरी 2019	1. बालबोध पाठमाला भाग-3 (मौखिक) 2. वीतराग-विज्ञान पाठमाला भाग-3 3. रत्नकरण्ड श्रावकाचार (पूर्ण) 4. पुरुषार्थसिद्ध्युपाय (पूर्ण) 5. विशारद द्वितीय खण्ड (द्वितीय वर्ष)

नोट - (1) सुविधानुसार परीक्षा का समय प्रात: 9 से शाम 5 बजे के बीच कभी भी सैट कर सकते हैं।
(2) जहाँ एक से अधिक केन्द्र हों, वे आपस में मिलकर समय निश्चित करें।
(3) किन्हीं विषयों के छात्र आपस में टकराते हों तो परीक्षा सुविधानुसार दिन में दो बार ली जा सकती है।
(4) बालबोध पाठमाला भाग 1, 2, 3 और जैन बालपोथी भाग-1 व 2 की परीक्षायें मौखिक में लेवें। शेष सभी विषयों की परीक्षायें लिखित में लेवें।

- नीशू शास्त्री, प्रबंधक-परीक्षा बोर्ड

यही है ध्यान... यही है योग...

- डॉ. हुकमचंद भारिल्ल

(दोहा)

अपनेपन के साथ ही निज आतम का ज्ञान।
रमो जमो बस यही है निज आतम का ध्यान।। १ ।।

(रेखता)

अरे निज आतम को पहिचान आतमा में अपनापन करें।
अरे अपने आतम को जान उसी में अपनेपन से जमे।।
यही है निश्चय सम्यग्दर्श यही है निश्चय सम्यग्ज्ञान।
रतन त्रय शामिल हो जाते करो यदि इक आतम का ध्यान।। २ ।।

काय चेष्टा कुछ भी मत करो और कुछ भी ना बोलो बोल।
और ना कुछ भी सोचो भाई! एक आतम में रमो अमोल।।
यही है निश्चय सम्यग्ज्ञान यही है निश्चय सम्यक् ध्यान।
यही है परम शुद्ध उपयोग यही है अद्भुत कार्य महान।। ३ ।।

यही है परम समाधीयोग यही है परमतत्व की लब्धि।
यही है आतम की संवित्ति यही है आतम की उपलब्धि।।
यही है परम भक्ति का भाव यही है निर्विकल्प आनन्द।
यही है परम समरसीभाव यही है परमशुद्ध आनन्द।। ४ ।।

यही है परम शुद्धचारित्र यही है स्वसंवेदन ज्ञान।
यही है स्वस्वरूप उपलब्धि यही है परमशुद्ध विज्ञान।।
यही है दिव्यध्वनि का सार यही है परमतत्त्व का बोध।
जगत में इसके बिन कुछ नहीं यही एकाग्र चित्त का रोध।। ५ ।।

यही एकाग्रचित्त का रोध यही है अपनेपन का बोध।
यही है उपयोगी उपयोग यही है योगिजनों का योग।।
इसी को कहते हैं सब लोग मिला है यह अद्भुत संयोग।
स्वयं को जानो मानो जमो यही है परमतत्त्व का बोध।। ६ ।।

स्वयं को जानो, जानो नहीं जानना होने दो तुम सहज।
जानने का तनाव मत करो जानते रहो निरन्तर सहज।।
अरे करने-धरने का बोझ उतारो हो जावो तुम सहज।
जानने के तनाव से रहित जानना होने दो तुम सहज।। ७ ।।

जानना होने दो तुम सहज जानने के विकल्प से पार।
और तुम हो जावो निर्भार भाड़ में जानो दो तुम भार।।
भाड़ में जाने दो तुम भार करो तुम अपने में निर्धार[१]।
यदि बनना चाहो भगवान उन्हीं-से हो जावो निर्भार।। ८ ।।

उन्हीं-से[२] हो जावो निर्भार उन्हीं-से हो जावो निर्ग्रन्थ।
चाहते हो तुम भव का अंत शीघ्र ही छोड़ो जग का पंथ।।
सहजता जीवन का आनन्द यही है परमागम का पंथ।
चलो तुम परमागम के पंथ शीघ्र आवेगा भव का अंत।। ९ ।।

शीघ्र आवेगा भव का अन्त प्रगट होगा आनन्द अनन्त।
ज्ञान-दर्शन भी होंगे नंत वीर्य भी होगा अरे अनन्त।।
अनन्तानन्द अनन्तानन्द अनन्तानन्द अनन्तानन्द।
अनन्तानन्द अनन्तानन्द अरे भोगोगे काल अनन्त।। १०।।

(दोहा)

महिमा आतमध्यान की जिसका आर न पार।
आतम आतम में रमे हो जावे भव पार ।। ११ ।।

(द्रव्यसंग्रह महामण्डल विधान की जयमाला पृष्ठ ४० से साभार...)

१. सोच समझकर निश्चित करना। २. उनके समान ही।

सम्पादकीय

कुन्दकुन्द शतक अनुशीलन

(गतांक से आगे ...)

वादविवाद उचित नहीं

(९४)

णाणाजीवा णाणाकम्मं णाणाविहं हवे लद्धी।
तम्हा वयणविवादं सगपरसमएहिं वज्जिज्जो।।

(हरिगीत)

है जीव नाना कर्म नाना लब्धि नानाविध कही।
अतएव वर्जित वाद है निज-पर समय के साथ भी।।

जीव नाना प्रकार के हैं, कर्म नाना प्रकार के हैं और लब्धियाँ भी नाना प्रकार की हैं। अतः स्वमत और परमतवालों के साथ वचनविवाद उचित नहीं है, निषेध योग्य है। **किसी से वाद-विवाद करना आत्मार्थी का काम नहीं है।**

यह गाथा नियमसार शास्त्र के निश्चय परमावश्यक अधिकार की १५६वीं गाथा है।

इसमें **किसी के साथ वादविवाद करने का स्पष्ट निषेध किया है।**

उक्त गाथा में तो मात्र यही कहा गया है कि जीव अनेक प्रकार के हैं, उनके कर्म (ज्ञानावरणादि द्रव्यकर्म, रागादि भावकर्म और देहादि नोकर्म अथवा कार्य) अनेक प्रकार के हैं और उनकी लब्धियाँ, उपलब्धियाँ भी अनेक प्रकार की हैं; अत: सभी की समझ, मान्यता, विचारधारा एक कैसे हो सकती है? यही कारण है कि सभी जीवों के परिणामों में विभिन्नता देखी जाती है, मतभेद पाया जाता है; इसकारण **सभी को एकमत करना संभव नहीं है, समझाना भी संभव नहीं है; क्योंकि बहुत कुछ**

सामनेवाले की योग्यता पर ही निर्भर होता है।

यदि तुझे समझाने का भाव आता है तो कोई बात नहीं; अपने विकल्प की पूर्ति कर ले; पर तेरे समझाने पर भी कोई न माने, स्वीकार न करे तो अधिक विकल्प करने से कोई लाभ नहीं।

समझाने के विकल्प से भी किसी से वाद-विवाद करना तो कदापि ठीक नहीं है। न तो अपने मतवाले के साथ और न अन्यमतवालों के साथ विवाद करना कदापि ठीक नहीं है।

टीकाकार मुनिराज ने नाना जीव का अर्थ करते हुए जीवों के मुक्त और संसारी, संसारियों के त्रस और स्थावरादि भेद गिना दिये अथवा भव्य-अभव्य की बात कर दी। उनका स्वरूप भी संक्षेप में समझा दिया। कर्म में ज्ञानावरणादि ८ मूल प्रकृतियों और १४८ उत्तर प्रकृतियों की चर्चा कर दी। लब्धियों के भी पाँच भेद गिना दिये।

मैं क्षमायाचनापूर्वक अत्यन्त विनम्रता के साथ कहना चाहता हूँ कि मुझे ऐसा लगता है कि यहाँ इन सब की आवश्यकता नहीं थी; क्योंकि एक तो नियमसार का अध्येता इन सब जैनदर्शन संबंधी प्राथमिक बातों से भलीभाँति परिचित ही है; दूसरे यहाँ **मुख्य वजन तो स्वसमय और परसमय के साथ वाद-विवाद नहीं करने की बात पर है।**

समझने-समझाने के विकल्प में पड़ कर वाद-विवाद में उलझ जाना समझदारी का काम नहीं है, केवल मनुष्यभव के कीमती समय को व्यर्थ में बर्बाद करना ही है।

गृहस्थों को भी उक्त महत्त्वपूर्ण सलाह अत्यन्त उपयोगी है, परन्तु मुनियों के लिए तो अत्यन्त आवश्यक है, अनिवार्य है।

नाना जीव का आशय विभिन्न रुचिवाले जीवों से है। आचार्य अकलंकदेव ने भी राजवार्तिक में इसप्रकार के प्रसंग में ऐसा ही कहा है। वे लिखते हैं -''**विभिन्नरुचय: हि लोका: - लौकिकजन भिन्न-भिन्न रुचिवाले होते हैं।**''

इसीप्रकार कर्मों के उदय से होनेवाले जीव के औदयिक भाव भी अनेक प्रकार के होते हैं तथा लब्धि अर्थात् पर्यायगत योग्यता भी प्रत्येक जीव की प्रतिसमय भिन्न-भिन्न होती है। ऐसी स्थिति में **सबका एकमत होना असंभव नहीं तो दुर्लभ अवश्य है।**

इसप्रकार **यहाँ लब्धियों के माध्यम से क्षणिक उपादान के रूप में पर्यायगत योग्यता, अंतरंग निमित्त के रूप में कर्मोदय और जीवों के रूप में त्रिकाली उपादान को ले लिया गया है।**

कहने का आशय यह है कि समझ में आने के लिए उसका द्रव्य-स्वभाव, पर्यायस्वभाव और अंतरंग निमित्त जिम्मेवार हैं; यदि उसकी समझ में आ जावे तो भी तू मात्र बहिरंग निमित्त होगा। इसलिए **समझाने के विकल्प से वाद-विवाद करना समझदारी नहीं है।**

इसके बाद टीकाकार मुनिराज उक्त भाव का पोषक एक छन्द लिखते हैं, जिसमें गाथा की मूल बात को पूरी तरह दुहरा दिया है।

उक्त छन्द मूलत: इसप्रकार है -

(शिखरिणी)

विकल्पो जीवानां भवति बहुधा संसृतिकर:
तथा कर्मानेकविधमपि सदा जन्मजनकम्।
असौ लब्धिर्नाना विमलजिनमार्गे हि विदिता
तत: कर्तव्यं नो स्वपरसमयैर्वादवचनम्॥२६७॥

(हरिगीत)

संसारकारक भेद जीवों के अनेक प्रकार हैं।
भव जन्मदाता कर्म भी जग में अनेक प्रकार हैं॥
लब्धियाँ भी हैं विविध इस विमल जिनमारगविषें।
स्वपरमत के साथ में न विवाद करना चाहिए॥२६७॥

जीवों के संसार के कारणभूत अनेक प्रकार के भेद हैं, जन्मोत्पादक कर्म भी अनेक प्रकार के हैं और निर्मल जैनमार्ग में लब्धियाँ भी अनेक

प्रकार की प्रसिद्ध हैं। इसलिए **स्वसमय और परसमय के साथ विवाद करना कर्त्तव्य नहीं है।**

विकल्प शब्द का अर्थ भेद भी होता है; इसकारण गाथा के अनुसार यहाँ विकल्प का अर्थ भेद मानकर ही अर्थ किया गया है। तथापि मन में उठनेवाले **अनेक प्रकार के भावों को भी विकल्प कहते हैं।**

यदि इसके अनुसार अर्थ किया जाये तो ऐसा भी कर सकते हैं कि जीवों के संसार-वर्धक अनेक प्रकार के विकल्प होते हैं, मान्यताएँ होती हैं। इसीप्रकार कर्म का अर्थ कार्य भी होता है।

तात्पर्य यह है कि लोगों के कार्य भी अनेक प्रकार के हैं। पर्यायगत योग्यता को लब्धि कहते हैं। 'लब्धियाँ अनेक प्रकार की हैं' - का अर्थ यह भी हो सकता है कि जीवों की पर्यायगत योग्यतायें भी अनेक प्रकार की हैं, विभिन्न प्रकार की हैं।

इसप्रकार इस छन्द का एक सहज अर्थ यह भी किया जा सकता है कि जीवों के मन में अनेक प्रकार की विकल्प तरंगे उठती हैं, उनके अनेक प्रकार के कार्य देखे जाते हैं और उनकी पर्यायगत योग्यताएँ भी अलग-अलग होती हैं। इसकारण **सब का एकमत हो पाना असंभव नहीं तो कठिन अवश्य है। अत: आत्मार्थियों का यह परम कर्त्तव्य है कि वे उक्त संदर्भ में किसी से भी वाद-विवाद में न उलझें।**

ध्यान रहे, समझना-समझाना अलग बात है और वाद-विवाद करना अलग। समझने-समझाने का भाव ज्ञानीजनों को भी आ सकता है, आता भी है, वे समझाते भी हैं; पर वे किसी से वाद-विवाद में नहीं उलझते।

वाद-विवाद में जीत-हार की भावना रहती है; जबकि समझने में जिज्ञासा और समझाने में करुणाभाव रहता है। यही कारण है कि साधर्मी भाई-बहिनों में तत्त्वचर्चा तो होती है, पर वाद-विवाद नहीं।

यहाँ वाद-विवाद का निषेध है; चर्चा-वार्ता का नहीं, शंका समाधान का नहीं, पठन-पाठन का भी नहीं; क्योंकि ये तो स्वाध्याय तप के भेद हैं।

आचार्यदेव यह उपदेश देकर आपको व्यर्थ के वाद-विवाद से बचाना चाहते हैं। तत्त्वचर्चा के माध्यम से स्वाध्याय करने को मना नहीं करते। स्वाध्याय करने की तो वे बारम्बार प्रेरणा देते हैं; क्योंकि **स्वाध्याय तो परमतप है।**

ज्ञाननिधि को गुप्तरूप से भोगो

(९५)

लद्धूणं णिहि एक्को तस्स फलं अणुहवेइ सुजणत्ते।
तह णाणी णाणणिहिं भुंजेइ चइत्तु परततिं।।

(हरिगीत)

ज्यों निधि पाकर निज वतन में गुप्त रह जन भोगते।
त्यों ज्ञानिजन भी ज्ञाननिधि परसंग तज के भोगते।।

जिसप्रकार कोई व्यक्ति निधि को पाकर अपने वतन में गुप्तरूप से रहकर उसके फल को भोगता है, उसीप्रकार ज्ञानी भी जगतजनों से दूर रहकर - गुप्त रहकर ज्ञाननिधि को भोगते हैं।

यह गाथा नियमसार शास्त्र के निश्चय परमावश्यक अधिकार की १५७वीं गाथा है। इसमें यह बताया गया है कि यदि ज्ञाननिधि प्राप्त हो गई है तो उसे गुप्त रहकर भोगो, जगत के जंजाल में मत उलझो।

यह एक सीधी, सहज, सरल गाथा है, इसमें इतना ही कहा गया है कि जिसप्रकार लोक में यदि किसी को कोई गुप्त खजाना मिल जावे तो वह उसे अत्यन्त गुप्त रहकर भोगता है; किसी को भी नहीं बताता। उसीप्रकार **ज्ञानीजन भी रत्नत्रयरूप निधि पाकर उसे गुप्त रहकर भोगते हैं, उसका प्रदर्शन नहीं करते।**

मूल गाथा में तो परसंग तजकर ज्ञाननिधि को भोगने की बात अत्यन्त स्पष्टरूप से कही है; पर न जाने क्यों टीकाकार परसंग को छोड़ने की बात कहकर ही बात समाप्त कर देते हैं; ज्ञाननिधि को भोगने की बात ही नहीं करते।

'हम आत्मज्ञानी हैं' – इस बात का ढिढ़ोरा पीटनेवालों को इस प्रकरण पर विशेष ध्यान देना चाहिए कि यदि हमें आत्मानुभूतिरूप निधि की प्राप्ति हो गई है तो उसे गुप्त रहकर क्यों नहीं भोगते, उसका ढ़िढोरा क्यों पीटते हैं, क्यों पीटना चाहते हैं ?

उस समय भी ऐसे लोग रहे होंगे, जो स्वयं के ज्ञानीपने का ढ़िढोरा पीटते होंगे। उन्हें संबोधने के विकल्प से आचार्यदेव को यह सब लिखना पड़ा।

आज इसप्रकार के उपदेश की अत्यन्त आवश्यकता है; क्योंकि आज तो गली-गली में इसप्रकार के लोग बैठे हैं। थोड़ा-बहुत अध्ययन किया, दो वाक्य बोलना सीखे, बस इतने से ही स्वयं महन्त बन के बैठ जाते हैं और उपदेश देने लगते हैं।

स्वयं को अनुभवी और जगत को अज्ञानी घोषित करनेवाले वे लोग स्वयं तो संसार-सागर में डूबते ही हैं और अनुकरण-अनुसरण करनेवालों को भी डुबोते हैं।

उन्हें लक्ष्य करके ही आचार्यदेव कहते हैं कि **यदि तुझे आत्मानुभूति रूप निधि प्राप्त हो गई है तो एकान्त में जाकर उसका आनन्द क्यों नहीं लेता ?**

लोक में तो ऐसी गलती कोई नहीं करता कि निधि (खजाना) प्राप्त होने पर दुनियाँ में प्रचार करता फिरे कि मुझे खजाना मिल गया है। वहाँ तो वह बहुत अच्छी तरह समझता है कि चारों ओर लुटेरे ही लुटेरे हैं।

ज्ञाननिधि के साथ ऐसा क्यों नहीं होता ?

ज्ञाननिधि के साथ भी ऐसा ही होता है। **असली ज्ञाननिधि वाले तो सब अपने में मगन होकर उसका आनन्द लेते हैं;** किन्तु वे लोग जो वस्तुत: तो ज्ञानी हैं नहीं और ज्ञानीपने का प्रदर्शन करते हैं; वे ऐसा करते हैं। **असली ज्ञानी तो बहुत धीर-गंभीर होते हैं।**

आचार्यदेव द्वारा उक्त सम्पूर्ण कथन उन लोगों के लक्ष्य से ही लिखा गया है; जो लोग आत्मज्ञानशून्य होने पर भी जगत के सामने ज्ञानी के रूप में प्रस्तुत होना चाहते हैं या प्रस्तुत हो रहे हैं। **(क्रमश:)**

छहढाला प्रवचन

अनित्य भावना

जोबन-गृह-गो-धन-नारी, हय-गय-जन आज्ञाकारी।
इन्द्रिय-भोग छिन थाई, सुरधनु चपला चपलाई।।३।।

(सुप्रसिद्ध आध्यात्मिक विद्वान पण्डित दौलतरामजीकृत छहढाला की पांचवीं ढाल पर गुरुदेवश्री के प्रवचन पाठकों के लाभार्थ यहाँ प्रस्तुत किये जा रहे हैं।)

(गतांक से आगे....)

शरीर का यह यौवन, घर, गाय, धन, स्त्री, घोड़ा, हाथी आज्ञाकारी कुटुम्बीजन, सेवक, इन्द्रिय-भोग इत्यादि सभी पदार्थ इन्द्रधनुष अथवा बिजली की चमक के समान क्षणभंगुर हैं, अध्रुव हैं, अनित्य हैं - इसप्रकार उनकी अध्रुवता का विचार करके, उनका आश्रय छोड़ना चाहिए तथा स्वयं के ध्रुव ज्ञानस्वभाव का आश्रय करना चाहिए। यही अध्रुव भावना का तात्पर्य है।

अरे, शरीरादि परपदार्थों के कार्य मैं करता हूँ, उनमें मेरा सुख है, जिसको ऐसी मिथ्या मान्यता होती है तथा आत्मा का भान नहीं होता है, उसको सच्ची वैराग्य भावना कहाँ से जगेगी और वह अन्तर में एकाग्र कैसे होगा? शरीर तो अनित्य स्वभाववाला है; फिर भी मैं उसको बचा लूँगा - ऐसा माननेवाले की देह में मूर्च्छा है, उसे जड़-चेतन का भेदज्ञान नहीं है; इसलिए उसे देह के प्रति सच्चा वैराग्य कभी नहीं होता। अरे भाई! प्रभु! एकबार जड़-चेतन की भिन्नता को लक्ष्य में लेकर विचार तो कर। शरीर में रोगादि हो अथवा निरोगता रहे, उसके तुम मात्र जाननहार हो; परन्तु वे रोगादि तुममें नहीं हैं अथवा तुम्हारे लिए उनका परिणमन नहीं है। ये देह तो अनन्त रजकणों के संयोग से बना पिण्ड है तथा तुम तो चेतन प्रभु हो, तुम अजीव के कर्ता कैसे हो सकते हो और तुम्हारे साथ वे अजीव पदार्थ

नित्य कैसे रह सकते हैं? तुम्हारे साथ नित्य रहनेवाला तो तुम्हारा चैतन्यस्वभाव है।

लक्ष्मी, शरीर, सुख-दु:ख अथवा शत्रु-मित्रजन इत्यादि कोई भी ध्रुव नहीं है, ध्रुव तो एकमात्र उपयोगात्मक जीव है, वही त्रिकाली शाश्वत है। ऐसे स्वभाव को जानकर उसकी भावना करनी चाहिए; क्योंकि वह भावना आनन्दजननी है, वैराग्य की माता है, सुख की सहेली है।

शरीर की युवावस्था क्षणिक है। लोग भरी जवानी में भी हृदयगति रुक जाने से मरते देखे जाते हैं। शरीर-घर-धन-नारी-हाथी-घोड़ा अथवा इन्द्रिय विषयों की अनुकूलता - ये सभी बिजली की क्षणिक प्रभा के समान क्षणभंगुर हैं। पहले हाथी-घोड़ा-रथ इत्यादि वैभव होता था; आजकल मोटर, बंगला, टीवी इत्यादि वैभव माने जाते हैं, वे सभी शरीर की भांति अध्रुव हैं, उनमें कहीं सुख नहीं है। सुख तो आत्मा के ध्रुव स्वभाव में भरा है। शरीर के परमाणु भले नित्य हैं; परन्तु उनसे बना शरीर और शरीर के साथ जीव का सम्बन्ध, कायम रहनेवाला नहीं है; अथवा जीव का शरीर के साथ सम्बन्ध हो तो भी उसमें कुछ सुख नहीं है। अंतरंग स्वरूप में ही सुख है, बाहर में कहीं सुख नहीं है।

देह की क्षणभंगुरता देखकर सनतकुमार चक्रवर्ती को वैराग्य हो गया था। उनके अद्भुत रूप की प्रशंसा सुनकर उन्हें दो देव देखने को आये थे। स्नान करते हुए चक्रवर्ती का सौन्दर्य देखकर उन्हें बहुत आश्चर्य हुआ कि वाह, कितना सुन्दर रूप है, तब सनतकुमार बोले कि हे सज्जनो ! अभी तो मैंने वस्त्राभूषण पहने ही नहीं, जब वस्त्रालंकार से सुशोभित होकर ठाट-बाट से मैं राज दरबार में बैठूँगा, तब मुझे देखना मैं कितना सुन्दर लगूँगा। जब राजदरबार में बैठे हुए सनतकुमार को उन्होंने देखा तो उन्हें अत्यन्त निराशा हुई। चक्रवर्ती ने पूछा, आप लोगों को मेरा रूप देखकर प्रसन्नता

क्यों नहीं हुई ? देवों ने कहा कि हे राजन् ! तुम्हारा औदारिक शरीर है, क्षणभर में उसमें रोग लग जाते हैं। कुछ देर पहले जब हमने तुम्हारा शरीर देखा था, तब वह निरोग था, वैसा अब नहीं है। अब उसमें कोई महारोग और सड़ान्ध लग गयी है, अत: पहले जैसी उसकी शोभा नहीं रही। शरीर की ऐसी क्षणभंगुरता देखकर राजा तुरन्त वैराग्य प्राप्त करता है और चक्रवर्ती का राज्य छोड़कर मुनिदशा धारण करता है।

कुछ काल बाद मुनिदशा में आत्मा के आनन्द में झूलते हुए उन सनत मुनिराज के शरीर में अचानक कोढ़ हो जाता है। उन्हें अपने थूक से ही उस रोग को मिटाने की दैवीय लब्धि थी; परन्तु उस पर उनका लक्ष्य नहीं था। अरे आत्मा में यह रोग कैसा ? आत्मा में तो भवरोग है, उसे रत्नत्रय -औषधि द्वारा वे मिटा ही रहे थे। शरीर के प्रति अत्यन्त उदासीन रहते थे। तब देव आकर वैद्य का रूप धारण करके कहते हैं कि हे प्रभो ! आप आज्ञा दो तो उपचार द्वारा हम इस रोग को मिटा दें। तब वैरागी मुनिराज कहते हैं कि हे भाई ! मुझे तो आत्मा का भवरोग मिटाना है। यह शरीर का रोग तो मेरे थूक लगाने मात्र से मिट जानेवाला है; परन्तु मुझे तो वीतराग भावरूप औषधि द्वारा भवरोग मिटाना है। यह सुनकर देववृन्द बहुत लज्जित हुए तथा कहने लगे कि हे - स्वामी ! भवरोग मिटाने की दवाई हमारे पास नहीं है, भवरोग मिटाने के लिए तो आप ही सच्चे वैद्य हो। आपकी यह अलौकिक वीतरागता धन्य है।

देखो, जिसको देखकर देवों को भी आश्चर्य होता था - ऐसा शरीर का अद्भुत रूप था, उन्हें कोढ़ होने पर उस रूप की रंचमात्र चिन्ता न हुई; बल्कि वे तो भेदज्ञान द्वारा देह के रूप से भिन्न अपने अतीन्द्रिय स्वरूप को जानते थे; इसलिए वैराग्यपूर्वक अनित्य भावना भाते थे। उन्होंने देह से अत्यन्त उदास होकर स्वरूपलीनता द्वारा आत्महित कर लिया। **(क्रमश:)**

नियमसार प्रवचन –

आचार में स्थिरता वाला प्रतिक्रमणमय

परमपूज्य सर्वश्रेष्ठ दिगम्बराचार्य कुन्दकुन्द के प्रसिद्ध परमागम नियमसार के परमार्थप्रतिक्रमणाधिकार की गाथा ८६ पर हुये आध्यात्मिकसत्पुरुष श्रीकानजीस्वामी के अध्यात्मरस गर्भित प्रवचनों का संक्षिप्त सार यहाँ दिया जा रहा है। गाथा मूलत: इसप्रकार हैं –

उम्मग्गं परिचत्ता जिणमग्गे जो दु कुणदि थिरभावं।
सो पडिकमणं उच्चइ पडिकमणमओ हवे जम्हा।।८६।।

(हरिगीत)

छोड़कर उन्मार्ग जो जिनमार्ग में थिरता धरे।
प्रतिक्रमणमय है इसलिए प्रतिक्रमण कहते हैं उसे।।८६।।

जो जीव उन्मार्ग को छोड़कर जिनमार्ग में स्थिरभाव करता है, वह जीव ही प्रतिक्रमण कहा जाता है; क्योंकि वह प्रतिक्रमणमय है।

(गतांक से आगे....)

(२) अपने शुद्धस्वभाव की रुचि छोड़कर व्यवहाररत्नत्रय की वांछा धर्मी के नहीं होती, परपदार्थों की रुचिपूर्वक इच्छा नहीं होती।

(३) नग्न दिगम्बर मुनियों को देखकर धर्मी को ग्लानि नहीं होती।

(४) धर्मी जीव अन्यमतावलम्बी की प्रशंसा नहीं करता। पर की दया पाली जा सकती है अथवा दया करते-करते धर्म होगा – इसप्रकार माननेवाले तथा कहनेवाले श्रावक नामधारी हों या मुनि नामधारी हों – वे सब मिथ्यादृष्टि हैं, सम्यग्दृष्टि उनकी प्रशंसा मन से भी नहीं करता। 'उनका वैराग्य अच्छा है अथवा भाषण अच्छा है' – इसप्रकार वचन से कहना तो दूर रहा, धर्मी जीव मन में भी उनकी प्रशंसा नहीं करता।

(५) धर्मी जीव मिथ्यादृष्टि से अधिक परिचय भी नहीं करता और न

उसकी महिमा के वचन ही बोलता है। सर्वज्ञदेव कहते हैं कि प्रत्येक आत्मा सिद्धसमान है, वह शरीरादि का कुछ कर सकता नहीं, पुण्य से धर्म होता नहीं; तथापि जो जीव पुण्य से धर्म होता है – ऐसा माने; व्यवहार से निश्चय प्रकट होता है – ऐसा माने; निमित्त से उपादान में कार्य होता है – ऐसा माने और मनावे; वह जीव मिथ्यादृष्टि है, उसकी वचन से भी प्रशंसा धर्मी जीव नहीं करता। 'अहो'! भाई, तुम तो बहुत वैरागी हो, प्रतिमाधारी हो, पूर्ण व्रत पालते हो, ब्रह्मचर्य भी अच्छा पालते हो' – इसप्रकार उसके गुणगान वह नहीं करता।

भगवान सर्वज्ञदेव के श्रीमुख से निकली वाणी में से गणधर भगवान ने एक मुहूर्त्त में चौदह पूर्व और बारह अंग की रचना की, उन्हीं की परम्परा में कुन्दकुन्दादि आचार्यों ने शास्त्र की रचना की और टीकाकार मुनिराज ने भी रहस्य का उद्घाटन कर दिया है। जिसप्रकार राज्यविरुद्ध कार्य करनेवाला जीव अपराधी है; उसीप्रकार चैतन्यस्वभाव से विरुद्ध प्ररूपणा करनेवाला जीव भी अपराधी है; क्योंकि भगवान जैसा कहते हैं, वैसा वह नहीं मानता। भगवान तो कहते हैं कि आत्मा शरीर का कुछ नहीं कर सकता, उसको हिला-डुला नहीं सकता, वाणी निकाल नहीं सकता; फिर भी अज्ञानी जीव मानता है कि आत्मा के कारण शरीर चलता है, वाणी निकलती है – यह सब अज्ञानभाव है; इसलिए वह अन्यमती है। उसकी प्रशंसा मन से अथवा वचन से करने का निषेध है। इसप्रकार सम्यग्दृष्टि जीव शंका, कांक्षा आदि मलकलंक से रहित है। ये पाँच दोष महान हैं, धर्मी जीव इन सबसे रहित है। **(क्रमश:)**

देखो, तत्त्वविचार की महिमा !

देखो, तत्त्वविचार की महिमा ! तत्त्वविचार रहित देवादिक की प्रतीति करे, बहुत शास्त्रों का अभ्यास करे, व्रतादिक पाले, तपश्चरण आदि करे, उसको तो सम्यक्त्व होने का अधिकार नहीं और तत्त्वविचार वाला इसके बिना भी सम्यक्त्व का अधिकारी होता है।

– मोक्षमार्गप्रकाशक, पृष्ठ 260

समयसार की 47 शक्तियों पर प्रवचन

चिति शक्ति

आध्यात्मिकसत्पुरुष श्रीकानजीस्वामी द्वारा समयसार की 47 शक्तियों पर किये गये प्रवचनों को यहाँ पाठकों के लाभार्थ क्रमशः प्रकाशित किया जा रहा है।

(गतांक से आगे....)

सबसे पहले जब मैंने स्थानकवासी सम्प्रदाय में अपने गुरु की उपस्थिति में एक विशाल सभा में यह बात कही थी कि 'जीव की पर्याय में विकार कर्म के कारण होता है' - यह बात भी बिल्कुल गलत है तथा इसीप्रकार कर्म के नाश होने पर विकार का नाश होता है तो यह सुनकर उस समय स्थानकवासी सम्प्रदाय में खलबली मच गई।

जामनगर का एक सेठ बोला कि भाई! यह क्या कहा? यह तो डोरा के बिना ही पतंग उड़ाने जैसी बात है। तब मैंने कहा - इसमें कोई क्या करे, भाई! वस्तुस्थिति तो ऐसी ही है।

जो जड़कार्य की पर्याय होती है, वह जड़ परमाणु के षट्कारक से होती है और आत्मा की पर्याय में जो विकार होता है, वह अपने षट्कारक से होता है। वह विकार स्वयं के द्रव्य-गुण से भी नहीं होता और पर से भी नहीं होता।

विकार के होने में कर्म निमित्त अवश्य होता है; परन्तु कर्म के कारण विकार नहीं होता। तात्पर्य यह है कि विकार का वास्तविक कर्ता कर्म नहीं है।

जीवत्वशक्ति के बाद आचार्यदेव ने इस चितिशक्ति का वर्णन किया है। आत्मा में जो शाश्वत दर्शन-ज्ञानमय चेतनाशक्ति है, वह भी अजड़त्वस्वरूप है। इसलिए परद्रव्य और परभाव के साथ उसका कोई भी कारण-कार्य सम्बन्ध नहीं है।

अहो! यह अलौकिक बात है। ज्ञान की निर्मलदशा का कोई अन्य परद्रव्य या परभाव कारण नहीं है और कार्य भी नहीं है। अहा! इससे पहले जीव ने कभी भी यह अपूर्व मार्ग प्रगट नहीं किया; अतः अनादि से लेकर आजतक जीव का अनन्तकाल चर्तुगति परिभ्रमण में ही गया।

आत्मा अनन्तधर्मात्मक एक शाश्वत ध्रुवधर्मी है। यहाँ धर्म का क्या अर्थ है? धर्म अर्थात् शक्ति/स्वभाव। आहाहा! धर्मी एक शाश्वत आत्मद्रव्य है और उसके चिति-ज्ञान-सुख-वीर्य आदि धर्म भी त्रिकाल शाश्वत हैं तथा जो उनकी पर्याय होती है, वह एक समय की है। **पर्याय शाश्वत नहीं है, क्षणिक है; परन्तु मैं शाश्वत चैतन्यचमत्कार वस्तु आत्मा हूँ - ऐसा ज्ञान-श्रद्धान करनेवाली पर्याय त्रिकाली ध्रुव के आश्रय से प्रगट होती है।** इसप्रकार अनित्य से नित्य जानने में आता है। नित्य स्वयं नहीं जानता; क्योंकि नित्य कूटस्थ है। **नित्य ध्रुवद्रव्य और अनित्य क्षणिकपर्याय - इसप्रकार अनेकान्तमय एक सम्पूर्ण वस्तु आत्मा है और इसे ही ज्ञानमात्र आत्मा कहा जाता है।**

प्रश्न - ज्ञानमात्र कहने में तो एकान्त हो जायेगा; क्योंकि 'जीव का स्वरूप ज्ञानमात्र है' - ऐसा कहने से उसमें अनन्तगुण नहीं आते। अतः अनन्तगुणात्मक आत्मा को अकेला ज्ञानमात्र क्यों कहते हो?

उत्तर - ज्ञानमात्र कहकर उसमें शरीर, कर्म, वाणी और पुण्य-पाप के भाव नहीं हैं - इसप्रकार जड़पने का निषेध किया है। ज्ञानमात्र आत्मा में आत्मा के अनन्तगुण तो शामिल ही हैं। ऐसी ज्ञानमात्र वस्तु के अन्तःसन्मुख होकर स्वीकार करते ही जब जीव में ज्ञानचेतना प्रगट होती है, तभी श्रद्धा, चारित्र, सुख, वीर्य इत्यादि सर्व अनन्तगुणों की निर्मलपर्यायें प्रगट होती हैं। अहाहा! जिसप्रकार समुद्र में ज्वार आता है, उसीप्रकार चैतन्यरत्नाकार प्रभु आत्मा में ज्ञानमात्र भाव का परिणमन होने पर सर्वशक्तियों से निर्मल परिणमनरूप तरंगें उछलती हैं, आनन्द का ज्वार आता है। आत्मा का ऐसा अनेकान्तस्वरूप है। **(क्रमशः)**

ज्ञान गोष्ठी

सायंकालीन तत्त्वचर्चा के समय विभिन्न मुमुक्षुओं द्वारा
पूज्य स्वामीजी से पूछे गये प्रश्न और स्वामीजी द्वारा दिये गये उत्तर

प्रश्न : न्याय और तर्क से तो ये बातें जमती है, किन्तु अन्दर जाने का साहस क्यों नहीं हो पाता ?

उत्तर : अन्दर में पहुँचने का जितना पुरुषार्थ होना चाहिए, उतना नहीं बन पाता, इसीलिए बाहर भटकता रहता है। अन्दर जाने की रुचि नहीं हैं; इसीलिए उपयोग अन्दर नहीं जाता ।

प्रश्न : ज्ञान का स्वभाव जानने का ही है, तो स्वयं अपने को क्यों नहीं जानता ?

उत्तर : ज्ञान स्वयं को जानता है; उसका स्वभाव स्वयं को जानने का है; परन्तु अज्ञानी की दृष्टि तो पर के ऊपर है, अत: स्वयं को नहीं जानता, उसे पर में अधिकता (महिमा) पड़ी है अर्थात् पर को अधिक मानने के कारण स्वयं अपने को नहीं जानता। अधिकपने इसका बल पर में जाता है; अत: अपने को नहीं जान पाता।

प्रश्न : भगवान आत्मा को ज्ञानमात्र क्यों कहा जाता है ? आप बारम्बार 'भगवान आत्मा...भगवान आत्मा' कहते हैं ? कृपया उसका स्वरूप बताइये ?

उत्तर : भाई ! भगवान आत्मा अनन्त शक्तियों का संग्रहालय, अनन्त गुणों का गोदाम, अनन्त आनन्द का कन्द, अनन्त महिमावंत, अतीन्द्रिय महापदार्थ है; उसे ज्ञानमात्र भी कहा जाता है। आत्मा ज्ञानमात्र है अर्थात् वह शरीर, मन, वाणी और पुण्य-पापरूप नहीं है, एक समय की पर्यायमात्र भी नहीं है। वह ज्ञान, दर्शन, अकार्यकारण, भाव, अभाव आदि अनन्त शक्तिमय है।

प्रभु ! तेरे घर की क्या बात कहें ? तुझमें अनन्त शक्तियाँ भरी पड़ी हैं और एक-एक शक्ति अनन्त सामर्थ्यवान है, एक-एक शक्ति अनन्त गुणों में व्यापक है, एक-एक शक्ति में दूसरी अनन्त शक्तियों का रूप है, एक-एक शक्ति दूसरी

अनन्त शक्तियों में निमित्त है। एक-एक शक्तियों की अनन्त पर्यायें हैं, वे पर्यायें क्रम-क्रम से होती हैं, इसलिये क्रमवर्ती हैं। अनन्त शक्तियाँ एकसाथ रहती हैं, इसलिये वे अक्रमवर्ती हैं।

इसप्रकार आत्मद्रव्य अक्रमवर्ती और क्रमवर्ती गुण-पर्यायों का पिण्ड है। द्रव्य शुद्ध है, गुण भी शुद्ध है; इसलिये उसकी दृष्टि करने पर परिणमन भी शुद्ध ही होता है। मैं ज्ञानमात्र वस्तु हूँ - ऐसी दृष्टि होने पर पर्याय में जीवत्व शक्ति का परिणमन हुआ; उसके साथ ज्ञान, दर्शन, आनन्द, अकार्यकारणत्व आदि अनन्त शक्तियों की पर्यायें उछलती हैं - प्रगट होती हैं।

प्रश्न : उछलती हैं अर्थात् क्या ?

उत्तर : द्रव्य वस्तु है, उसमें अनन्त शक्तियाँ है। जब एक शक्ति का परिणमन होता है, तब अनन्त शक्तियों की परिणति एकसाथ उत्पन्न होती है - इसी को उछलना कहा जाता है।

प्रश्न : क्या अज्ञानी को प्रथम से ही आत्मा की बात कहनी चाहिये ?

उत्तर : समयसार की गाथा-8 में आचार्यदेव ने आत्मा आनन्दस्वरूप है उसको पहचानने के लिये समझाया है। प्रथम ही द्वीप, समुद्र, लोक की रचना आदि की जानकारी अथवा व्रतादि करने के लिये नहीं कहा; अपितु शुद्धात्मा को पहचानने के लिये कहा है। समझने के लिये आनेवाला भी अभी आत्मा को समझा नहीं है, फिर भी जिज्ञासा से टकटकी लगाकर देख रहा है; उससे कहते हैं कि जो दर्शन-ज्ञान-चारित्र को सदैव प्राप्त हो, उसे आत्मा कहते हैं। इसप्रकार व्यवहारी जीवों को भी प्रथम शुद्धात्मा ही समझाया है। अनादिकालीन बंधन से छूटकर मुक्ति कैसे प्राप्त हो ? - यही आचार्यदेव अज्ञानी जीव को समझाते हैं।

प्रश्न : जीव को शरीरवाला अथवा रागवाला कहना तो व्यवहार से कथन है; किन्तु जीव को सम्यग्दर्शनवाला तो कह सकते हैं न ?

उत्तर : जीव को सम्यग्दर्शनवाला कहना भी पर्याय की ओर से किया गया व्यवहार कथन है। जीव तो विज्ञानघनस्वरूप है। सम्यग्दर्शन पर्याय तो एक अंश है; जबकि जीव त्रिकाली विज्ञानघनस्वरूप है।

समाचार दर्शन -

अहमदाबाद में पञ्चकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव संपन्न

अहमदाबाद (गुज.) : यहाँ वस्त्रापुर स्थित अहमदाबाद एज्यूकेशन सोसायटी ग्राउन्ड में श्री कुन्दकुन्द कहान दिगम्बर जैन परमागम मंदिर चेरिटेबल ट्रस्ट, वस्त्रापुर द्वारा आयोजित श्री 1008 शान्तिनाथ दिगम्बर जिनबिम्ब पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव शुक्रवार, दिनांक 7 दिस. से बुधवार 12 दिस. तक अनेक मांगलिक कार्यक्रमों सहित सानन्द सम्पन्न हुआ।

महोत्सव में आध्यात्मिकसत्पुरुष श्रीकानजीस्वामी के सी.डी. प्रवचनों के साथ अन्तरराष्ट्रीय ख्यातिप्राप्त विद्वान **डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल** के धर्मध्यान के चार भेद, तप कल्याणक व आहारदान विषय पर मार्मिक प्रवचनों का लाभ मिला। इसके अतिरिक्त पण्डित वीरेन्द्रजी आगरा, पण्डित राजेन्द्रकुमारजी जबलपुर, पण्डित देवेन्द्रजी बिजौलिया, पण्डित शैलेषभाई शाह वस्त्रापुर, पण्डित चेतनभाई मेहता राजकोट आदि विद्वानों का समागम प्राप्त हुआ।

महोत्सव ब्र. जतीशचंदजी शास्त्री दिल्ली के प्रतिष्ठाचार्यत्व, पण्डित संजयजी शास्त्री मंगलायतन के मंच संचालन एवं पण्डित रजनीभाई दोशी हिम्मतनगर के निर्देशन में संपन्न हुआ।

बालक शांतिनाथ के माता-पिता बनने का सौभाग्य श्रीमती निपुणाबेन-सुरेशभाई शाह को प्राप्त हुआ। महोत्सव के सौधर्म इन्द्र-इन्द्राणी श्री निखिलभाई-नेहाबेन गांधी, कुबेर इन्द्र-इन्द्राणी श्री चिरेनभाई-कुंजलबेन शाह एवं यज्ञनायक-नायिका श्री परेशभाई-शिल्पाबेन कोठारी थे। प्रतिष्ठा मण्डप का उद्घाटन श्री सेवंतीलाल अमृतलाल गांधी परिवार ने किया।

दिनांक 9 दिसम्बर को बाल तीर्थंकर का सौधर्मादि इन्द्रों के पश्चात् सर्वप्रथम अभिषेक करने का सौभाग्य श्री जयंतीलाल कचरालाल शाह परिवार और शारदाबेन शांतिलाल शाह परिवार को मिला। सायंकाल 40 फीट का कांच से बना विशाल पालना दर्शनीय रहा, जिसका उद्घाटन एवं सर्वप्रथम आहारदान श्री शारदाबेन शांतिलाल शाह परिवार ने किया।

विधिनायक भगवान शांतिनाथ के भेंट व विराजमानकर्ता श्री राजेशभाई नानुभाई झवेरी तथा रसिकलाल जगजीवनदास शाह थे। इस पंचकल्याणक में अत्यंत सुन्दर मंदिर में निर्मित आकर्षक पंचमेरु में 80 प्रतिमाएं विराजमान की गईं। साथ ही गुरुदेवश्री कानजीस्वामी ने जिनका स्वाध्याय किया - ऐसे 37 ग्रंथों को एक साथ देखा जा सके, इस प्रकार से विराजमान किया गया।

संपूर्ण महोत्सव में पूजन, प्रवचन, आध्यात्मिक गोष्ठियों, भक्ति एवं सांस्कृतिक कार्यक्रमों की धूम मची रही। सांस्कृतिक कार्यक्रमों के अन्तर्गत '**अध्यात्मयोगी राम**' नामक नाटक का मंचन किया गया। संपूर्ण कार्यक्रम में लगभग 5-6 हजार साधर्मियों ने धर्मलाभ लिया। महोत्सव में सत्साहित्य व सैंकड़ों सी.डी./डी.वी.डी. घर-घर पहुंची।

पंचकल्याणक महोत्सव का सफल संचालन ट्रस्ट के अध्यक्ष श्री रमेशचन्द्र वाडीलाल शाह ने किया। साथ ही समिति के समस्त पदाधिकारियों और अनेक नगरों के मुमुक्षु मण्डल व युवा फैडरेशन के सदस्यों का भी महत्त्वपूर्ण योगदान रहा। ●

गुजरात के टी.वी. चैनल पर डॉ. भारिल्ल...

अहमदाबाद-वस्त्रापुर में हुए पंचकल्याणक के दौरान दिनांक 10 दिसम्बर को एक गुजराती टी.वी. चैनल द्वारा अन्तरराष्ट्रीय ख्यातिप्राप्त विद्वान **डॉ. हुकमचंदजी भारिल्ल** का इंटरव्यू लिया गया, जिसमें उन्होंने जैनधर्म के प्रमुख सिद्धांत 'अहिंसा' के बारे में विस्तार से चर्चा की।

ध्वनि पटेल द्वारा लिये गये इस विशेष इन्टरव्यू का प्रसारण देशभर में किया गया। डॉ. भारिल्ल ने पंचकल्याण के स्वरूप, क्रमबद्धपर्याय तथा जैनतत्त्वज्ञान जैसे विषयों पर तो अपने विचार रखे ही, आपने आज की राजनीतिक समस्या राममंदिर के संबंध में भी अपने विचार खुलकर रखे, आपने इन्टरव्यू के माध्यम से कानजीस्वामी के योगदान की चर्चा की। इस इन्टरव्यू को यू-ट्यूब के **ptst jaipur** पर भी देखा जा सकता है।

डॉ. भारिल्ल सोनगढ में...

अहमदाबाद के पंचकल्याणक के पश्चात् **डॉ. हुकमचंदजी भारिल्ल** दिनांक 9 दिसम्बर को आध्यात्मिकसत्पुरुष श्रीकानजीस्वामी की कर्मस्थली सोनगढ पधारे। यहाँ आपका बैंड बाजे के साथ पदार्पण हुआ और विद्यार्थी गृह के विद्यार्थियों द्वारा भावभीना अभिनन्दन किया गया। पण्डित सोनूजी शास्त्री ने अपने गुरुजी का आत्मीय सम्मान किया। स्मरण रहे कि आप लम्बे समय के पश्चात् पश्चिम भारत में स्थापित होने वाली भगवान बाहुबली की विशाल प्रतिमा के दर्शनार्थ सोनगढ पधारे थे। आपने श्री कुन्दकुन्द कहान पारमार्थिक ट्रस्ट मुम्बई द्वारा संचालित विद्यालय का निरीक्षण किया तथा विद्यार्थियों के मध्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी के महती योगदान की चर्चा करते हुए विद्यार्थियों को अध्ययनार्थ टोडरमल स्मारक में आने की प्रेरणा दी।

पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी के समस्त ऑडियो - वीडियो प्रवचन साहित्य एवं अन्य अनेक जानकारियों के लिये अवश्य देखें -

वेबसाईट - www.vitragvani.com

संपर्क सूत्र - श्री कुन्दकुन्द कहान पारमार्थिक ट्रस्ट, मुम्बई

Ph.: 022-26130820, 26104912, E-Mail- info@vitragvani.com

ये सभी प्रवचन सामग्री अब vitragvani एप पर भी उपलब्ध है।

श्री टोडरमल दिगम्बर जैन सिद्धांत महाविद्यालय की –

साप्ताहिक गोष्ठियाँ संपन्न

जयपुर (राज.) : यहाँ टोडरमल स्मारक भवन में टोडरमल महाविद्यालय के विद्यार्थियों द्वारा आयोजित गोष्ठियों के क्रम में दिनांक 21 नवम्बर को '**कर लो जिनवर की पूजन** ' विषय पर गोष्ठी का आयोजन हुआ, जिसकी अध्यक्षता पण्डित मनीषजी कहान, जयपुर ने की।

श्रेष्ठ वक्ता के रूप में यश जैन खुरई (उपाध्याय वरिष्ठ) एवं आर्जव मोदी विदिशा (उपाध्याय कनिष्ठ) रहे। गोष्ठी का मंगलाचरण हर्षित जैन दमोह (उपाध्याय कनिष्ठ) ने एवं संचालन शास्त्री तृतीय वर्ष के रजत जैन कापरेन व विनीत जैन मुम्बई ने किया।

ज्ञातव्य है कि यह गोष्ठी पण्डित रतनचंदजी भारिल्ल के जन्मदिवस के उपलक्ष्य में उनकी कृति 'जिनपूजन रहस्य' के आधार पर संपन्न हुई।

दिनांक 23 नवम्बर को '**पंचभाव : एक अनुशीलन**' विषय पर गोष्ठी का आयोजन हुआ, जिसकी अध्यक्षता विदुषी प्रतीति पाटील, जयपुर ने की।

श्रेष्ठ वक्ता के रूप में चेतन जैन गुढाचन्द्रजी (उपाध्याय कनिष्ठ) एवं तुषार जैन दिल्ली (उपाध्याय वरिष्ठ) रहे। गोष्ठी का मंगलाचरण आदित्य जैन (उपाध्याय कनिष्ठ) ने एवं संचालन शास्त्री तृतीय वर्ष के अनुभव जैन खनियांधाना व श्रेणिक लट्ठे ने किया।

दिनांक 30 नवम्बर को '**जैनेतर दर्शन : एक मीमांसा**' विषय पर गोष्ठी का आयोजन हुआ, जिसकी अध्यक्षता डॉ. नरेन्द्रजी शास्त्री जयपुर ने की।

श्रेष्ठ वक्ता के रूप में आकाश हलाज उगार (शास्त्री द्वितीय वर्ष), देवांश जैन अमरमऊ (शास्त्री द्वितीय वर्ष) रहे। गोष्ठी का मंगलाचरण अमन जैन ग्वालियर (उपाध्याय कनिष्ठ) ने, संचालन शास्त्री तृतीय वर्ष के प्रतीक जैन विदिशा व अमन जैन दिल्ली ने एवं ग्रंथ भेंट गौरवजी उखलकर ने किया।

दिनांक 5 दिसम्बर को '**निमित्त-उपादान : एक अनुशीलन**' विषय पर उपाध्याय वर्ग की गोष्ठी का आयोजन हुआ, जिसकी अध्यक्षता पण्डित पीयूषजी शास्त्री जयपुर ने की।

श्रेष्ठ वक्ता के रूप में स्वानुभव जैन खनियांधाना (उपाध्याय वरिष्ठ) एवं शाश्वत जैन भोपाल (उपाध्याय वरिष्ठ) रहे। गोष्ठी का मंगलाचरण सौरभ कालेगोरे (उपाध्याय कनिष्ठ) ने एवं संचालन शास्त्री तृतीय वर्ष के रजत जैन कापरेन व प्रशांत जैन ललितपुर ने किया।

गोष्ठियों का आभार प्रदर्शन जिनकुमारजी शास्त्री ने किया।

डॉ. भारिल्ल के आगामी कार्यक्रम

26 दिस.से 1 जन.2019	**जयपुर**	**विदेशियों हेतु शिविर**
16 से 21 जनवरी 2019	**हेरले**	**पंचकल्याणक**
22 से 24 फरवरी 2019	**जयपुर**	**वार्षिकोत्सव**

गुरुदेवश्री का स्मृति दिवस मनाया

जयपुर (राज.) : यहाँ टोडरमल स्मारक भवन में दिनांक 29 नवम्बर को आध्यात्मिकसत्पुरुष श्रीकानजीस्वामी का स्मृति दिवस मनाया गया।

इस अवसर पर तार्किक विद्वान डॉ. हुकमचंदजी भारिल्ल, डॉ. शान्तिकुमारजी पाटील, श्री परमात्मप्रकाशजी भारिल्ल, डॉ. संजीवकुमारजी गोधा, डॉ. दीपकजी जैन 'वैद्य', पण्डित रमेशजी शास्त्री 'दाऊ', पण्डित पीयूषजी शास्त्री, पण्डित प्रमोदजी शास्त्री, श्री कैलाशचंदजी सेठी, श्रीमती कमला भारिल्ल आदि महानुभाव मंचासीन थे।

कार्यक्रम में डॉ. भारिल्ल ने अपने विचार व्यक्त करते हुए कहा कि मैंने हमेशा पूज्य गुरुदेवश्री की नीति **No reply is best reply** का ही अनुसरण किया है; किसी को जवाब देना आवश्यक नहीं समझा। विद्यार्थियों को विशेष रूप से संबोधित करते हुए कहा कि आप 1 हजार विद्वानों में मुझे गुरुदेवश्री नजर आते हैं; अत: आप सभी को वैसा ही कार्य करना है जैसा गुरुदेवश्री ने किया है।

तत्पश्चात् डॉ. शांतिकुमारजी पाटील, परमात्मप्रकाशजी भारिल्ल, डॉ. संजीवजी गोधा एवं अच्युतकांतजी शास्त्री ने भी अपने विचार व्यक्त किये। छात्रों के अन्तर्गत अमन जैन दिल्ली व आप्तअनुशीलन जैन दमोह ने वक्तव्य प्रस्तुत किया। इसके अतिरिक्त सोमिल जैन दलपतपुर, संयम जैन मड़देवरा, अंकुर जैन खड़ैरी, अनुभव जैन खनियांधाना ने कविता के रूप में अपने मनोभाव प्रस्तुत किये। कार्यक्रम के पूर्व 1 घंटे तक गुरुदेवश्री का समयसार की 17-18वीं गाथा पर वीडियो प्रवचन प्रसारित किया गया।

कार्यक्रम में महाविद्यालय के समस्त छात्रों के अतिरिक्त अनेक स्नातक एवं उनके परिजन भी उपस्थित थे।

कार्यक्रम का मंगलाचरण शास्त्री प्रथम वर्ष के पल त्रिवेदी, गांधीनगर ने एवं संचालन जिनकुमारजी शास्त्री ने किया।

पाठकों से निवेदन

वीतराग-विज्ञान (मासिक) पत्रिका के हजारों पाठक देश-विदेश में है। इसके कवर पृष्ठ पर प्रतिमाह अलग-अलग दिगम्बर जैन तीर्थक्षेत्रों/मन्दिरों की फोटो प्रकाशित की जाती है। आपसे निवेदन है कि आप अपने क्षेत्र की सुन्दतम आकर्षक फोटो (शिखर सहित) भेजें, ताकि हम समयानुसार उसे छाप सकें। मन्दिर का फोटो डाक द्वारा निम्न पते पर या सॉफ्टकॉपी ई-मेल द्वारा भेज सकते हैं।

पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट, ए-4, बापूनगर, जयपुर-302015 (राज.)

फोन : (0141) 2705581, 2707458 **E-mail- ptstjaipur@yahoo.com**

श्री टोडरमल जैन मुक्त विद्यापीठ के छात्र ध्यान दें

पत्राचार पाठ्यक्रम की दिसम्बर 2018 के अंतिम सप्ताह में होने वाली द्वितीय सेमेस्टर की परीक्षाओं के पाठ्यक्रम का विवरण निम्नानुसार है; परीक्षार्थी इसी के अनुसार तैयारी करें-

द्विवर्षीय विशारद परीक्षा

प्रथम वर्ष (द्वितीय सेमेस्टर) –
1. वीतराग विज्ञान पाठमाला भाग-2
2. वीतराग विज्ञान पाठमाला भाग-3

द्वितीय वर्ष (द्वितीय सेमेस्टर) –
1. तत्त्वज्ञान पाठमाला भाग-2
2. धर्म के दशलक्षण + भक्तामर स्तोत्र

त्रिवर्षीय सिद्धांत विशारद परीक्षा

प्रथम वर्ष (द्वितीय सेमेस्टर)–
1. रत्नकरण्ड श्रावकाचार
2. रामकहानी + आप कुछ भी कहो

द्वितीय वर्ष (द्वितीय सेमेस्टर)–
1. मोक्षमार्गप्रकाशक पूर्वार्द्ध (1 से 5 अध्याय)
2. नयचक्र-पूर्वार्द्ध (निश्चय व्यवहार)
3. हरिवंशकथा + भ.महावीर और उनका सर्वोदय तीर्थ

तृतीय वर्ष (द्वितीय सेमेस्टर)–
1. मोक्षमार्गप्रकाशक उत्तरार्द्ध (6 से 10 अध्याय)
2. नयचक्र-उत्तरार्द्ध (द्रव्यार्थिक पर्यायार्थिक नय प्रकरण)
3. शलाका पुरुष (सम्पूर्ण)

नोट : सभी परीक्षार्थियों को उनके प्रश्नपत्र केन्द्र/उनके पते पर दिसम्बर के तृतीय सप्ताह तक डाक द्वारा भेज दिये जायेंगे। यदि 25 दिसम्बर तक भी पेपर न मिले तो जयपुर कार्यालय से संपर्क करें।

सामूहिक शिक्षण शिविर संपन्न

बण्डा (म.प्र.) : यहाँ भगवान महावीर निर्वाणोत्सव के अवसर पर श्री 1008 पंचबालयति दिगम्बर जिन स्वाध्याय मंदिर में वीतराग विज्ञान पाठशाला समिति एवं शास्त्री परिषद् के संयुक्त तत्त्वावधान में दिनांक 4 से 11 नवम्बर तक बिनैका, कर्रापुर, दलपतपुर, बण्डा आदि स्थानों पर सामूहिक शिक्षण शिविर संपन्न हुआ।

इस अवसर पर पण्डित विरागजी शास्त्री एवं पण्डित रविन्द्रजी मड़देवरा का विशेष समागम प्राप्त हुआ। पण्डित विरागजी की संगीतमय कथा, बच्चों द्वारा अनेक सांस्कृतिक कार्यक्रम, शहपुरा (जबलपुर) एवं बड़ागांव में पाठशाला का संचालन आदि शिविर की विशेष उपलब्धियाँ रहीं। शिविर का संयोजन पण्डित अंकितजी शास्त्री, पण्डित मयंकजी सिद्धार्थी एवं पण्डित देवांशुजी शास्त्री ने किया।

R.N.I. No. 38278/83 *Postal Regd. No. JaipurCity/421/2018-20*

तीर्थधाम ढाईद्वीप जिनायतन में 3 BHK की बिल्डिंग पूर्ण

सम्पादक :
डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल
शास्त्री, न्यायतीर्थ, साहित्यरत्न, एम.ए., पीएच. डी
सह-सम्पादक :
डॉ. संजीवकुमार गोधा
एम.ए.द्वय , नेट, एम. फिल (जैनदर्शन), पीएच.डी
प्रकाशक एवं मुद्रक :
ब्र. यशपाल जैन, एम. ए.
द्वारा पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट के लिये
जयपुर प्रिंटर्स प्रा.लि., जयपुर से
मुद्रित एवं प्रकाशित।

If undelivered please return to -- **Pandit Todarmal Smarak Trust , A-4, Bapu Nagar, Jaipur - 302015**